International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 12
September 2017

ईस्ट इण्डिया कम्पनी की राजनीतिक शक्ति की स्थापना के समय भारत की सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थिति का विश्लेषणात्मक अध्ययन

Saveen
MA in History, UGC Net
Email : skjakhar70@gmail.com
VPO – Jhanwa, Jhajjar, Haryana (India)

18वीं शताब्दी में औरंगजेब की मृत्यू के पश्चात्, सम्पूर्ण भारत की राजनीतिक अस्थिरता तथा चारो ओर सता के लिए संघर्ष के कारण समाज में असुरक्षा एवं अशांति का वातावरण उत्पन्न हो गया। जाति प्रथा के कठोर बंधन, छूआछूत, स्त्री की दयनीय स्थिति, असंगत सामाजिक परंपराएं 18वीं शताब्दी में भारतीय समाज की विशेषताएं बन गई। लोगों को धार्मिक जीवन भी अत्यधिक रूढ़िग्रस्त हो गया। हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई आदि धर्मों की अपनी–अपनी प्रथाएं प्रचलित थी। समाज में अमीरी तथा गरीबी का बहुत भेद था। नादिरशाह तथा अहमदशाह अब्दाली के आक्रमणों के परिणामस्वरूप लोगों का जीवन असुरक्षित हो गया। शिक्षा, कला तथा साहित्य का भी पतन हो रहा था। पी. एन. चौपड़ा, पुरी एवं दास ने अपनी पुस्तक 'भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक इतिहास' में लिखा है कि ''अज्ञानता और अंधविश्वास के मध्य ऐसी सामाजिक प्रथाएं भी धार्मिक दृष्टि से मान्य प्रतीत होने लगी जो वास्तव में हारिकारक और खतरनाक थी। पंडित वर्ग किसी भी सामाजिक बुराई को शास्त्रोचित बताकर इसे धार्मिक कार्य का रूप दे रहे थे। कन्या वध, बाल–विवाह, बहुविवाह, विधवाओं को जीवित जला देना और ऐसी ही अन्य सामाजिक बुराईयों को शास्त्रोचित और धार्मिक क्रियाएँ करार दे दिया गया और इसलिए अत्यन्त जघन्य कार्य करने से पहले भी किसी के अन्तःकरण को कोई क्लेश नहीं होता था। इसी प्रकार जात–पात, अस्पृश्यता, महिलाओं को पर्दे में रखना और दास प्रथा जैसी सामाजिक बुराईयाँ शास्त्रोचित समझी गई, इसलिए उन्हें विधिसम्मत तथा गौरव की बात मान लिया गया। इस प्रकार 18वीं शताब्दी असहिष्णुता और असंगत प्रथाओं का दौर थी।''

वर्णव्यवस्था एवं जाति प्रथा की कठोरता :–

ईस्ट इंडिया कंपनी के द्वारा भारत के राजनीतिक सत्ता की स्थापना के समय भारतीय समाज में प्राचीन काल से चली आ रही वर्ण व्यवस्था अत्यधिक कठोर हो गई। समाज में अभी भी चार मुख्य जातियाँ– ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शुद्र थी। हालांकि इस समय इनमें अनेक जातियाँ तथा उपजातियाँ कायम हो गई थी। इन जातियों में जन्म लेने वाले व्यक्तियों के व्यवसाय जातीय आधार पर बचपन से ही निश्चित कर दिए जाते थे। समाज में किसी भी व्यक्ति की योग्यता, कुशलता एवं क्षमता का कोई स्थान नहीं था। यहां तक की लड़के और लड़कियों के वैवाहिक संबंध भी वर्ण व्यवस्था के आधार पर तय किए जाते थे। कोई भी व्यक्ति अपने बच्चों के विवाह अपने वर्ण से बाहर नहीं कर सकता था। यदि वह ऐसा करता तो उसे जाति या वर्ण या समाज से निष्कासित कर दिया जाता था। भारतीय समाज में प्रत्येक वर्ण की वेशभूषा, रहन–सहन, खान–पान, आचार–विचार भिन्न–भिन्न थे जिनका पालन करना आवश्यक था। हिन्दू धर्म भी वर्ण व्यवस्था की मुख्य विशेषता थी जिसके आधार पर समाज में विभिन्न वर्णों का श्रेणीक्रम निश्चित किया जाता था। इसके अनुसार समाज में ब्राह्मणों को प्रथम स्थान, क्षत्रियों को द्वितीय स्थान, वैश्यों

को तृतीय तथाा शुद्रों को निम्न स्थान प्राप्त था। इसी क्रम के आधार पर भारतीय समाज बना हुआ था। कोई भी व्यक्ति अपना वर्ण नहीं बदल सकता था। चाहे वह कितनी ही सामाजिक, आर्थिक तथा बौद्धिक उन्नति ने कर ले।

18वीं शताब्दी के मध्य भारतीय समाज अनेको जातियों तथा उपजातियों में बंटा हुआ था। समाज में ऊँच और नीच का बहुत भेद था। जहां उच्च जातियों के पास जीवन की सभी सुविधाएँ उपलब्ध थी, वहीं पर निम्न जातियों के पास जीने के लिए जरूरी साधन भी उपलब्ध नहीं थे। हिन्दू जातियाँ आपस में एक–दूसरी से घृणा करती थी। ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य भी हजारो जातियों, उपजातियों में विभाजित थे। वे केवल अपनी जाति में ही मिलजुल कर रहते थे। समाज में जाति–प्रथा रीति–रिवाजों पर बहुत बल दिया जाता था। शुद्रों की संख्या समाज में सबसे ज्यादा थी। शुद्रों में हादी, डोम, चाण्डाल सबसे निम्न दर्जे के माने जाते थे। अछूतों अर्थात् शुद्रों को नगर अथवा गाँवों से बाहर रहना पड़ता था। उन्हें मन्दिरों एवं सार्वजनिक स्थानों पर आने–जाने की अनुमति नहीं थी। उच्च वर्ण या जाति के लाग शुद्रों को अपवित्र मानकर उन्हें अस्पृश्य माना जाता था। परिणामस्वरूप निम्न जातियों के लागों में हीन भावना विकसित हो गई।

जाति प्रथा का प्रभाव केवल हिन्दुओं में नहीं बल्कि मुसलमान, सिक्ख, बौद्ध तथा जैन धर्म के लोगों पर भी देखने को मिलता हैं 18वीं शताब्दी में इन धर्मों के लोग भी अनेकों जातियों में या वर्गों में विभाजित हो गए थे। मुसलमान नस्ल, कबीले, जाति आदि के आधार पर बंटे हुए थे। उनमें शिया तथा सुन्नी के भेद के अलावा ईरानी, अफगानी, तुरानी, भारतीय मुसलमान आदि का भेद भी प्रचलित था। उच्च वर्ग के सुन्नी मुसलमान शिया मुसलमानों से किसी भी प्रकार के वैवाहिक या अन्य कोई संबंध स्थापित नहीं करते थे।?

पितृ प्रधान समाज :–

18वीं शताब्दी में भी भारत का समाज पितृ प्रधान था। परिवार में सबसे बड़ी उम्र का व्यक्ति मुखिया कहलता था। परिवार के सभी सदस्य उसकी आज्ञाओं का पालन करते थे। परिवार में पत्नी, पिता, पुत्र, भाई, बहन, दादा, दादी आदि निवास करते थे। परिवार का मुखिया ही परिवार के बच्चों को शिक्षा तथा विवाह आदि का प्रबंध करता था। उसी के नाम पर पुत्रों का ही अधिकार माना जाता था। परिवार के अपने रीति–रिवाज तथा परंपराएँ आदि होती थी, जिनको पालन करना सभी सदस्यों के लिए अनिवार्य था। प्रत्येक परिवार में कठोर अनुशासन पर बल दिया जाता था। परिवार की परंपराओं या अनुशासन के उल्लंघन करने पर कठोर दण्ड दिया जाता था। परन्तु केरल के प्रदेशों में मातृ–प्रधान परिवार प्रचलित था जिसमें समस्त परिवार की देखभाल स्त्री करती थी।

स्त्रियों की स्थिति :–

भारत में ईस्ट–इण्डिया कमपनी के शासन की स्थापना के समय स्त्रियों की स्थिति बहुत दयनीय थी। उस समय स्त्रियों पर अनेक धार्मिक तथा सामाजिक प्रतिबन्ध लगे हुए थे। प्राचीन काल में स्त्रियों को शिक्षा प्राप्त करने, अपनी मर्जी से विवाह करने, धार्मिक क्रियाएँ सम्पन्न करने, धन सम्पत्ति के स्वामित्व प्राप्त करने आदि के अधिकार प्राप्त थे, परन्तु कालांतर में उनसे ये सभी अधिकार छीन लिए गए थे। स्त्रियों को आर्थिक दृष्टि से पुरूषों पर आश्रित माना जाने लगा था। मनु का भी यह कथन था कि ''स्त्रियों को कभी भी स्वतंत्र नहीं रखा जाए। पुत्री के रूप में वह अपने पिता के संरक्षण में रहे, पत्नी के रूप में वह पति के अधीन रहे तथा विधवा के रूप में वह अपने पुत्रों पर निर्भर रहे। अन्य धर्मशास्त्रों, स्मृतियों तथा ग्रंथों में भी स्त्रियों की स्थिति को इसी प्रकार का दर्शाया गया है।''

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 12
September 2017

18वीं शताब्दी के मध्य स्त्री समाज में अनेक कुप्रथाएँ जैसे– बाल विवाह, सती प्रथा, कन्या वध, विधवा पुनर्विवाह की आज्ञा देना, पर्दा प्रथा आदि प्रचलित थी। इन कुप्रथाओं को चलते स्त्रियों का जीवन बहुत कष्टदायक बन गया था। समाज के सभी वर्ग इन बुराईयों को मौन स्वीकृति प्रदान करते थे। ईस्ट–इण्डिया कम्पनी भारतीयों के सहयोग के बिना स्त्रियों की स्थिति में सुधान नहीं कर सकती थी।

भारतीय समाज के कुछ स्थानों पर अथवा यदा–कदा कुछ सम्मान भी प्राप्त था। अहल्याबाई ने 1733 ई. से 1796 ई. तक इन्दौर पर कुशलतापूर्वक शासन किया था। इसके अलावा अनेक हिन्दू एवं मुस्लिम स्त्रियाँ भी राजनीति में भाग लेती थी। एक माँ के रूप में भी स्त्रियों का मान–सम्मान किया जाता था। पुत्र उत्पन्न होने पर माता का मान–सम्मान और दोगूना बढ़ जाता था।

धार्मिक अन्धविश्वास :–

18वीं शताब्दी के भारतीय समाज में अनेक प्रकार के धार्मिक अन्धविश्वास प्रचलित थे। धार्मिक अन्धविश्वासों के कारण सती–प्रथा, पर्दा प्रथा, बाल–विवाह, कन्या वध, बहु–विवाह, अशिक्षा, स्त्रियों की दयनीय स्थिति जैसी अनेक बुराईयाँ उत्पन्न हो गई थी। देवताओं को प्रसन्न करने के लिए विभिन्न प्रकार के जादू–टोने तथा मानव एवं पशुओं की बलियाँ चढाई जाती थी। हिन्दुओं में यह विश्वास घर कर गया था कि काली माता मनुष्य की बलि मांगती है। यदि ऐसा न किया गया तो मनुष्यों को भयानक आपदाओं का सामना करना पड़ेगा। अपने आपको समाप्त करना भी मानव बली मानी जाती थी। विपत्तियों से बचने के लिए किसी बच्चे की बलि किसी देवी या देवता के सामने चढ़ा दी जाती थी। कुछ माता–पिता पुत्र की चाहत में अपनी लड़की को गंगा नदी को अर्पित कर देते थे। इसके अलावा कुछ लोग मोक्ष की प्राप्ति के लिए नदी में डूब कर या आत्मदाह करके अथवा जगन्नाथपुरी के रथ के पहिये के नीचे अपने को समाप्त कर देते थे। हिन्दु तथा मुसलमा दोनों ही जातियों में बीमारियों एवं भूत–प्रेतों को भगाने के लिए जादू–टोनो एवं तन्त्र विद्या का सहारा लिया जाता था। समाज में अशिक्षा एवं अज्ञानता के कारण उत्पन्न हुए अन्धविश्वासों से समाज का सही प्रकार से चलना दुभर हो गया था।

शिक्षा :–

18वीं शताबदी के मध्य मुगल साम्राज्य का पतन हो गया। समस्त भारत छोटे–छोटे स्वतंत्र राज्यों में विभाजित हो गया और वे एक दूसरे के विरूद्ध संघर्षरत रहते थे। अंग्रेजों ने भारतीय राज्यों की आपसी फूट का लाभ उठाया। उस समय समाज में फैली अव्यवस्था तथा असुरक्षा का भारतीय शिक्षा पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। राजकीय सहायता के अभाव में अनेकों शिक्षा संस्थाएँ बन्द हो गई। यद्यपि पुर्तगालियों, डचों, अंग्रेजां तथा फ्रांसिसियों ने पूर्वी तथा पश्चिमी समुद्री तटों पर अपनी बस्तियाँ स्थापित कर ली थी, परन्तु इन क्षेत्रों में निवास करने वाले भारतीयों को कोई बौद्धिक लाभ प्राप्त नहीं हुआ। भारत के नवाब और क्षेत्रीय शासक विलासप्रिय जीवन व्यतीत करने में लगे रहते थे और वे शिक्षा की उन्नति की ओर कोई ध्यान नहीं देते थे। यहां तक की उस समय की भौगोलिक एवं तकनीकी खोजों का भी भारतीयों का कोई लाभ प्राप्त नहीं हुआ।

18वीं शताब्दी में हिन्दू और मुसलमानों के अलग–अलग शिक्षा केन्द्र स्थापित थे। हिन्दु शिक्षा संस्थाओं में क्षेत्रीय भाषाओं के साथ–साथ संस्कृत भाषा में शिक्षा प्रदान की जाती थी। मुस्लिम शिक्षा संस्थाओं में फारसी भाषा में शिक्षा प्रदान की जाती थी। आरम्भिक शिक्षा परम्परागत भाषा तथा गणित की मौखिक शिक्षा तक सीमित थी, जिसका लाभ धनी परिवार के बच्चे ही उठा पाते थे। अधिकतर जनसाधारण जनता शिक्षा से वंचित रह जाती थी। प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करने में बच्चे को पाँच वर्ष का समय लगता

था। स्कूलों में मनुष्यों के व्यवसाय एवं कृषि को ध्यान में रखते हुए शिक्षा प्रदान की जाती थी। आमतौर पर एक स्कूल मे एक ही शिक्षक शिक्षा देने का कार्य करता था। उच्च शिक्षा केन्द्रों में धर्म के अलावा व्याकरण, कानून, दर्शन, इतिहास, राजनीति शास्त्र आदि की शिक्षा प्रदान की जाती थी। आमतौर पर शिक्षा फारसी में दी जाती थी। उर्दू या अन्य भारतीय क्षेत्रीय भाषाओं का शिक्षा के माध्यम के तौर पर प्रयोग किया जाता था।

मुसलमानों के मकतबों एवं मदरसों में कुरान की शिक्षा के अलावा फारसी भाषा में साहितय, व्याकरण तथा गणित की शिक्षा दी जाती थी। मुस्लिम शिक्षा संस्थाओं में फिरदौसी, सादी, हफीज, उर्फी, जमी आदि की कविताएँ और गुलिस्तान, वाकई निमत खां अली आदि का गद्य साहित्य पढ़ाया जाता था। इसके अलावा चिकित्सा तथा ज्योतिष विज्ञान की भी शिक्षा प्रदान की जाती थी।

18वीं शताब्दी में ईसाई मिशनरियों कने पाश्चात्य शिक्षा देने का कार्य आरम्भ कर दिया था। आधुनिक स्कूल तथा कॉलेज भी प्रकाश में आने लगे थे। परन्तु भारतीयो को पाश्चात्य शिक्षा में कोई रूचि नहीं थी।

धर्म तथा सांस्कृतिक मेल–जोल :–

18वीं शताब्दी में हिन्दू धर्म में बहुदेवों की उपासना की जाती थी। उस समय ब्रह्म, विष्णु और महेश हिन्दुओं के तीन महत्वपूर्ण देवता थे। जिन्हें उत्पत्ति, शक्ति तथा विनाश के रूप में देखा जाता था। प्रत्येक हिन्दू परिवार में शिव की पत्नी पार्वती तथा विष्णु की पत्नी लक्षमी की उपासना की जाती थी। परन्तु ब्रह्मा की उपासना प्रचलित नहीं थी। अधिकांश लोग शिव की उपासना करते थे। निम्न वर्ग के लोग अर्थात् शिल्पी, घोषी, बढ़ई, लोहार आदि शिव की उपासना सबसे ज्यादा संख्या में करते थें राजपूतों में भी शिव की उपासना की जाती थी। भारतके अनेक स्थानों पर शिव के मन्दिर बने हुए थे। भारतीय स्त्रियाँ शिव का व्रत रखती थी। राजस्थान में विष्णु और लक्ष्मी की पूजा प्रचलित थी। इनके अलावा भारत के विभिन्न स्थानों पर दुर्गा, काली चामुण्डा, शीतला माता आदि देवियों की उपासना की जाती थीं सूर्य, अग्नि, इन्द्र, गणेश,गंगा एवं यमुना नदी आदि की उपासना भी उस समय की जाती थी।

उस समय भारतीय समाज में अनेक समुदाय जैसे शैव, वैष्णव, कनफटा एवं मुंडिया (जोगियों के समुदाय), गरीबदास, गोगा, बिश्नोई आदि भी स्थापित थे। इनमें भी काफी लोग विश्वास करते थे।

भारतीय मुसलमानों में इस्लाम के सिद्धान्तों में विश्वास जताया जाता था। विभिन्न मस्जिदों में शुक्रवार की नमाज अदा की जाती थी। रमजान के महीने में रोजे या उपवास रखे जाते थे। प्रत्येक मुसलमान को जीवन में हज की यात्रा करनी पड़ती थी। इसके अलावा मुसलमानों में सूफी धर्म के विभिन्न सम्प्रदायों में भी विश्वास किया जाता था। उस समय पीर की उपासना भी की जाती थी। निजामुद्दीन औलिया तथा सलीम चिश्ती की दरगाह पर लाखों की संख्या में लोग मन्नत मांगने अथवा उपासना करने के लिए जाते थे।

18वीं शताब्दी में हिन्दू तथा मुसलमानों दोनों धर्मों के लाग उपवास रखते थे। हिन्दुओं में शिव, कृष्ण, विष्णु, सत्यनाराय, दुर्गा, रामनवमी के नाम पर व्रत रखे जाते थे। इन अवसरों पर लोग पानी या फलों के अलावा कुछ नहीं खाते थे। शाम या रात को ब्रत पूरा होने पर पूजा–अर्चना करने के पश्चात् भोजन करते थे। शिव का व्रत दुर्गा अष्टमी के दिन रखा जाता था।

मुसलमान रमजान के महीने में तथा ईद–उल–अजहा और ईद–उल–फितर के दिन उपवास रखते थे। ईद तीन दिन मनाई जाती थी। नारौज तथा मुहर्रम के त्यौहार भी धूमधाम से मनाये जाते थे। मुहर्रम

का त्यौहार शिया मुसलमानों द्वारा मनाया जाता था। शबे–बारात के त्यौहार को मुसलमान हिन्दुओं के दिवाली त्योहार की तरह धूम–धाम से मनाते थे।

हिन्दुओं में होली, रक्षाबंधन, दशहरा, तीज, दिवाली आदि त्योहार बड़ी धूम–धाम से मनाई जाती थी।

18वीं शताब्दी में हिन्दु और मुसलमानों में सांस्कृतिक मेल–जोल भी देखने को मिलता है। अकबर जैसे सम्राटों द्वारा धार्मिक सहनशीलता की नीति अपनाये जाने के कारण तथा भक्ति आन्दोलन एवं सूफी आन्दोलन के फलस्वरूप भारतीय समाज में भाई–चारे का वातावरण उत्पन्न हो गया था। गांवों और नगरों में हिन्दू ग्रंथों का फारसी भाषा में अनुवाद किया। मुसलमान भी हिन्दू त्योहारों अर्थात् दिवाली, दशहरा, होली आदि को बड़ी धूमधाम से मनाते थे। इसी प्रकार हिन्दू भी ईद तथा मुहर्रम के त्योहारों में भाग लेते थे। हिन्दु कोई भी मन्नत मांगने के लिए मुसलमानों के सूफी शेखों तथा पीरों एवं दरगाहों पर जाते थे। यहां तक कि हिन्दू और मुसलमानों के पहनावे में भी समानता देखने को मिलती थी।

मध्यम वर्ग का उदय :–

18वीं शताब्दी में भारतीय समाज में एक नये वर्ग का उत्थान हुआ, जिसे मध्यम वर्ग के नाम से जाना जाता है। इस वग्र में पढ़े–लिखे आधुनिक विचारों के लोग जैसे शिक्षक, डॉक्टर, वकील, व्यापारी, उद्योगपति, आदि सम्मिलित थे। इन लोगों ने भारतीय समाज तथा संस्कति को विकास की ऊँचाईयों तक पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। राजा राम मोहन राय जैसे बुद्धिजीवियों ने सामाजिक कुरूतियों तथा धार्मिक अन्धविश्वासों के विरूद्ध आवाज उठाई और पाश्चात्य शिक्षा को अपनाने पर बल दिया। मध्यम वर्ग पाश्चात्य शिक्षा पद्धति तथा अंग्रेजी समाज से बहुत प्रभावित थां इसी वर्ग के प्रयासों से भारत में पुनर्जागरण आन्दोलन आरम्भ हुआ था। मध्यम वर्ग के प्रयासों से ही सती प्रथा, बाल–विवाह, कन्या वध आदि बुराईयों को समाप्त कर दिया गया।

निष्कर्ष :–

उपर्युक्त वर्णन के आधार पर कहा जा सकता है कि 18वीं शताब्दी भारतीय समाज में पर्दा प्रथा, कन्या वध, सती प्रथा, जाति प्रथा, जादू टोना, धार्मिक अन्धविश्वास, मानव बलि आदि अनेकों बुराईयाँ प्रचलित थी। शिक्षा केवल उच्च वर्ग के लोगों तक सीमित थी। जनसाधारण जनता को शिक्षा के प्रति रूचि नहीं थी। इसके बावजूद हिन्दू और मुसलमानों में एकता थी। हिन्दुओं और मुसलमानों के धार्मिक त्यौहार बड़ी धूम–धाम से मनाये जाते थे।

1. Bipan Chandra, The Rise and Growth of Economic Nationalism in India
2. Tripathi & De, Freedom Struggle.
3. Galagher Johnson & Seal, locality, Province and Nation.
4. Grover, B.L., A Documentary Study of the British Policy towards Indian Nationalism.
5. Low, D.A. (ed), Congress and the Raj.
6. Majumdar, R.C., History and Culture of the Indian People, vols. IX, X, XI.
7. Melane, J, Indian Nationalism and the Early Congress.
8. Mehortra, S.R., The Emergence of the Indian National Congress.

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 12
September 2017

9. Sarkar, Sumit, The Swadeshi Movement in Bengal.
10. Seal, Anil, The Emergence of Indian Nationalism.
11. Dutt B.P., India Today.
12. Tara Chand, History of freedom Movement in India.
13. Agrov Danie, Moderates and Extremists in Indian Nationalist Movement.
14. Dayal B., The Development of Modern Indian Education (1953).
15. Mukerjee, S.N., History of Education in India (1957).
16. Nurullah and Naik, History of Education in India during the British Period (1956).